उस जवान के जनाजे को एक दम खत्म किया जाय और हिन्दुस्तान में प्रादेशिक भाषाओं को कायम किया जाय। सरकार की यह ड्यूटी है। और अगर सरकार ऐसा नहीं करती है तो डिफेंस आफ इंडिया रूल्स के मातहत सरकार के खिलाफ कार्रवाई की जाय।

†**प्रधान मंत्री तथा वैदेशिक-कार्य मंत्री तथा अणुशक्ति मंत्री (श्री जवाहरलाल नेहरू)** : अध्यक्ष महोदय, पिछले सदस्य के भाषण से कुछ भ्रांति उत्पन्न हुई है। मैं यथा संभव इस मामले . . .

श्री यशपाल सिंह : आज के पवित्र वायुमंडल में प्रधान मंत्री हिन्दी में बोलें तो अच्छा रहे।

श्री बागड़ी (हिसार) : आज तो हमारे प्रधान मंत्री हिन्दी में बोलें तो अच्छा है।

अध्यक्ष महोदय : आप बैठ जायें। हर एक मेम्बर को हक हासिल है कि चाहे वह हिन्दी में बोले या अंग्रेजी में। यह उसकी मर्जी है। मैं किसी को इसके लिये कुछ नहीं कह सकता। आप बैठ जायें।

श्री बागड़ी : मैं प्रधान मंत्री से कहना चाहता हूं . . . .

अध्यक्ष महोदय : अब आप बैठ जायें।

श्री बागड़ी : गांधी जी की जवान तो बोलें।

श्री राम सेवक यादव : उत्तराधिकारी तो गांधी जी के हैं।

श्री जवाहरलाल नेहरू : मुझे समझ में नहीं आता कि पिछला भाषण किस बारे में था। प्रस्ताव के पक्ष में और विपक्ष में दिये गये भाषण. . . .

श्री बागड़ी : अध्यक्ष महोदय, मैं बाक आउट करता हूं क्योंकि ऐसे अहम भाषा के सवाल पर भी प्राइम मिनिस्टर हिन्दी में नहीं बोलते। मैं इस के विरोध में बाहर जाता हूं।

तब श्री बागड़ी ने सदन त्याग किया।

श्री जवाहरलाल नेहरू : मैं बहुत मश्कूर हूं माननीय सदस्य का अगर वह यहां से चले गये।

श्री रामसेवक यादव : उनके जाने का कम से कम एक असर तो हुआ कि आप हिन्दी में दो शब्द बोले।

अध्यक्ष महोदय : आर्डर, आर्डर, अगर आप भी चाहते हैं. . . .

श्री जवाहरलाल नेहरू : मैं और भी मश्कूर हूंगा।

अध्यक्ष महोदय : क्या आप बोलने की इजाजत ही नहीं देंगे किसी को ?

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : विधेयक को पेश करते समय सभा में एक ऐसा दृश्य उपस्थित हुआ था जो असामान्य, अशोभनीय और अरुचिकर था। वह अच्छी शुरूआत नहीं थी (**अन्तर्बाधायें**)। आपने उस विषय में कुछ कार्यवाही की थी। मैं नहीं जानता, किन्तु कम से कम मुझे ऐसी आशा है कि इस का उन लोगों पर कुछ असर हुआ होगा जिन्होंने उस अवसर पर दुर्व्यवहार किया था। यदि वह वास्तव में इस विषय में सोचें तो उन्होंने हिन्दी के पक्ष में इतनी क्षति की है जितनी भारत में और किसी ने नहीं की। यदि माननीय सदस्य इस प्रकार का आचरण करते हैं तो उनके तर्कों का उत्तर देना जरा कठिन है क्योंकि वह तर्क भी इसी प्रकार असंगत है।

---

†मूल अंग्रेजी में

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

कल एक माननीय सदस्य ने यहां तो नहीं किन्तु सभा के परिसर में ही एक असामान्य ढंग से व्यवहार किया। मैं नहीं जानता कि क्या उन सज्जन को, उन माननीय सदस्यों को, इस बात का जरा सा भी ज्ञान है कि संसद् क्या है, प्रजातंत्र क्या है, किसी को किस प्रकार व्यवहार करना चाहिये अथवा उससे किस प्रकार के आचरण की आशा की जाती है। यह विचित्र बात है कि हम किस ओर बढ़ रहे हैं।

यह बात भाषा समस्या से भी अधिक जटिल प्रश्नों को उत्पन्न करने वाली है। इसीलिए मैं उस का जिक्र कर रहा हूं, क्योंकि आखिर भाषा मानव की आन्तरिक भावना को ही अभिव्यक्त करती है और साथ ही हमारे काम-काज का भी साधन है। मैं ऐसा कहने के लिये पूर्णतया स्वतंत्र हूं कि मैं इसके स्थान पर कि भाषा के नाम पर, ऐसा आचरण किया जाये और प्रजातंत्र की पद्धति तथा दूसरी प्रत्येक वस्तु को भ्रष्ट किया जाये, किसी भी भाषा को चाहे वह स्वीडिश हो या फिनिश, स्वीकार करने के लिये तैयार हूं।

जैसा कि मैंने कहा था मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि कल दिये गये भाषण जिनमें से कुछ को मुझे सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था, और कुछ को मैंने बाद में पढ़ा था, अवसर के महत्व और समस्याओं को देखते हुये, जिन से काफी गर्मागर्मी और उत्तेजना उत्पन्न हो गई थी, विषय की नाजुकता को देखते हुये और इसके उपरान्त भी कि तीव्र भावनाओं का प्रदर्शन किया गया था वह सब भाषण संसदीय प्रथा और प्रक्रिया के अनुकूल और सुनने योग्य थे, चाहे हम उनके दृष्टिकोण से सहमत भले ही न हों। मेरा अभिप्राय प्रोफेसर मुकर्जी और डा० गोविन्द दास के भाषणों से है। डा० गोविन्द दास ने अधिकतर अपने भाषण में कई व्यक्तियों के उद्धरण पढ़ कर सुनाये, उनमें मेरी कही हुयी बातें भी थीं, और जिस निष्कर्ष पर वह पहुंचे हैं उससे मैं पूर्णतया सहमत हूं। उन की जो मान्यतायें थीं उन्होंने उन्हीं को अभिव्यक्त किया है और उनकी इस बात की मैं सराहना करता हूं।

मुझे खेद है कि मैं माननीय सदस्य श्री एन्थनी के भाषण के विषय में यही बात नहीं कह सकता। वह भाषण मैंने बाद को पढ़ा था। यह अत्यन्त अप्रिय था। मैं उनके विचारों के सम्बंध में कुछ नहीं कहता किन्तु जैसा उन्होंने स्वयं अपने भाषण में कहा वह अतिवादी, मैं समझता हूं उन्होंने हठधर्मीपूर्ण' शब्द का प्रयोग किया था, दृष्टिकोण प्रस्तुत कर रहे थे। इस प्रश्न पर विचार करने का यह उचित मार्ग नहीं है। मैं एक दो प्रश्नों के सम्बन्ध में जो यहां उठाये गये थे, बोलूंगा। इस पर अधिक आपत्तियां नहीं उठाई गई थीं, यद्यपि वादविवाद में काफी गर्मागर्मी उत्पन्न हो गई थी, क्योंकि वास्तव में विवाद हिन्दी और अंग्रेजी के विषय में नहीं था। इस को उस दृष्टिकोण से देखना अनुचित होगा।

यह विधेयक पिछले वर्षों में जो कुछ हुआ है उसी के सम्बन्ध में, संविधान द्वारा लगाये गये इस बन्धन को कि अंग्रेजी १९६५ के बाद जारी नहीं रहेगी, हटाने के सम्बन्ध में है। यह सभा में दिये गये एक आश्वासन को पूर्ण करने के विषय में है, और कुछ नहीं। और भी बहुत सी बातें हैं, किन्तु मुख्य बात उस बंधन को हटाना ही है। हम इस विधेयक को पिछले सत्र में ही पेश करना चाहते थे किन्तु आप लोगों को याद होगा कि उस सत्र में आपात काल से संबंधित बहुत सी बातों पर विचार करना था। यह सत्र था भी थोड़े समय के लिये ही, इसीलिये समय के अभाव के कारण हम ऐसा नहीं कर सके। तब हम पर यह आरोप लगाया गया कि हम जानबूझ कर इसे पेश नहीं कर रहे और इसे स्थगित कर रहे हैं, और यह आरोप उन्हीं लोगों ने लगाया जो आज इसे स्थगित करने के लिये कह रहे हैं। यह बात मेरी समझ में नहीं आती। सभा में कार्य की अधिकता होते हुये भी हमने उन लोगों को प्रसन्न करने के लिए जिन का यह विचार था कि हम इसे सभा में लाने का साहस नहीं कर सकते इसलिये

विभिन्न कारणों से इसे स्थगित कर रहे हैं और विषय की उपेक्षा कर रहे हैं, इस विधेयक को सभा में पेश किया है। अबहमसे कहा जा रहा है कि इसे स्थगित कर दिया जाये। मुझे यह कहते हुये खेद होता है कि मैं ऐसी मांग के आधारभूत तक को नहीं समझ पाता। इस विधेयक का मुख्य प्रयोजन संविधान द्वारा निर्धारित १९६५ तक के समय को न्यूनाधिक रूप से अनिर्धारित समय तक के लिये बढ़ाने का है। मुख्य ध्येय यही है, कुछ भाषा इत्यादि के विषय में मतभेद हो सकता है, और मैं समझता हूं इसी दृष्टि से देखना उचित होगा।

श्री फ्रैंक एन्थनी ने कई व्यक्तियों और मेरे द्वारा दिये गये आश्वासन के सम्बन्ध में बहुत कड़ी बातें कही हैं। मुझे खेद है, मैं समझता हूं कि मेरे अन्दर बौद्धिक क्षमता का सर्वथा अभाव नहीं है, तथापि उन्होंने जो कहा कि मैं अपने दिये हुये आश्वासन से पीछे हट रहा हूं वह मेरी समझ में बिल्कुल भी नहीं आया। उन्होंने यह भी कहा कि मेरे ऊपर सब तरह से दबाव डाला जा रहा है। मैं नहीं जानता मेरे ऊपर कौन दबाव डाल रहा है। मुझे इस की जानकारी नहीं है और न ही मैं किसी प्रकार के प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष दबाव के सामने झुका ही हूं। मैंने पिछले अवसर पर यहआश्वासन दिया था कि अंग्रेजी के सम्बन्ध में अहिन्दी-भाषी व्यक्तियों की सम्मति तथा अनुमोदन के बिना कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किया जायेगा। यह मेरा ही मत नहीं था अपितु सरकार का भी यही मत था। और आश्वासन देते समय मैं स्पष्ट रूप से यही समझ रहा था कि अधिकतर सभा का भी यही मत है। हम उस पर अब भी दृढ़ हैं, हमारे उस दृष्टिकोण में लेशमात्र भी अन्तर नहीं आया है। इसके अतिरिक्त चाहे मैंने कुछ भी कहा हो अथवा नहीं कहा हो, देश की परिस्थितियां ही कुछ इस प्रकार की हैं जो इसी दिशा में कदम उठाने की ओर इंगित कर रही हैं। हो सकता है कि जो सज्जन हवन तथा और बहुत सी बातें कर रहे हैं वह इस विषय में भिन्न मत रखते हों। श्री फ्रैंक एन्थनी भी उत्तेजना में भिन्न प्रकार से सोचते हों। मेरी सलाह है कि वह बाहर हवन करने वाले सज्जन से निकट सम्पर्क स्थापित करें . . .।

†**श्री फ्रैंक एन्थनी** (नाम निर्देशित-आंग्ल-भारतीय) : विधेयक द्वारा आश्वासन किस प्रकार पूरे हो जाते हैं ? अहिन्दी भाषी लोगों की सलाह किस प्रकार ली गई है ?

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** मैं उन बातों को भी स्पष्ट करूंगा। मैं नहीं जानता कि अहिन्दी भाषी लोगों से सलाह लेने के बारे में विधेयक में क्या कहा जा सकता था।

†**श्री फ्रैंक एन्थनी** : क्यों नहीं ?

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : मैं अपने विचारों के अनुसार ही कह रहा हूं, यह बिल्कुल असंगत और संविधान के विरुद्ध है। संसद में पारित किये जाने वाले। अधिनियम अथवा विधेयक से आश्वासन का कोई संबंध नहीं है। यह बात स्वरूप से ही असंगत प्रतीत होती है। इस प्रकार संसद विधान सभाओं और दूसरी संस्थाओं की शक्तियां सीमित हो जाती हैं। इस आश्वासन को दूसरे ही ढंग से कार्य रूप दिया। सरकार केवल इस बात का ध्यान रख सकती है कि इसके विरुद्ध, राज्य विधान सभाओं से सलाह लेते समय भी, कुछ न किया जाये। किन्तु सभा में ऐसा आश्वासन देना कि भविष्य में विधान आधे अथवा दो तिहाई सदस्यों द्वारा ही पारित किया जायेगा और अन्य सदस्यों को मत नहीं देना चाहिये, असंगत प्रतीत होता है। (**अन्तर्बाधायें**)।

"may" ["कर सकेगा"] और "shall" ["करेगा"] के सम्बन्ध में मैं यही कहूंगा कि जो लोग उत्तेजित हो जाते हैं वह ठीक तरह से नहीं सोच सकते। "may"

---

†मूल अंग्रेजी में

[जवाहर लाल नेहरू]

["कर सकेगा"] शब्द अत्यन्त सामान्य शब्द हैं और अंग्रेजी भाषा में इसका प्रयोग ऐसे स्थानों पर हमेशा किया जाता है । मैं श्री एन्थनी से अधिक अंग्रेजी जानने का दावा नहीं करता । किन्तु प्रश्न उस बन्धन को हटाना है कि किसी निश्चित तिथि के बाद अंग्रेजी का प्रयोग नहीं किया जा सकेगा । हम इस बन्धन को हटाने के लिये यह उपबन्ध कर रहे हैं कि बाद में भी इसका प्रयोग किया जा सकेगा । यह कहना बिल्कुल असंगत है कि "may" ["कर सकेगा"] का अर्थ " may not " ["नहीं कर सकेगा"] भी है ।

†**श्री फ्रैंक एन्थनी :** असंगत क्यों है ? यह इसका स्वाभाविक अर्थ है ।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू :** हो सकता है, किन्तु मैं माननीय सदस्य से असहमत हूं ।

†**श्री फ्रैंक एन्थनी :** यदि आप स्वाभाविक अर्थ से भी सहमत न हों तो मैं क्या कर सकता हूं ?

†**श्री जवाहरलाल नेहरू :** मैं इस प्रसंग में माननीय सदस्य से सहमत नहीं हूं । मेरा कहना यह है कि इस प्रसंग में इसका स्वाभाविक अर्थ यह नहीं है । शब्द कोश के अनुसार इसका ऐसा अर्थ हो अथवा नहीं किन्तु इस प्रसंग में इसका केवल यही अर्थ है कि बन्धन हटा दिया गया है और मैं चुनौती देता हूं, ललकारता हूं, यदि कोई इस बात को सिद्ध कर दे कि इस विधेयक द्वारा सीमायें और बन्धन नहीं हटाये गये हैं ।

अब हम इस पर तटस्थता और शांति के साथ विचार करेंगे । मैं मानता हूं कि यदि लोग उत्तेजित हो जायें तो ऐसा करना कठिन है । हो सकता है कि यह मेरे पालन-पोषण के ही कारण हो, किन्तु अंग्रेजी के प्रति मेरा अधिक झुकाव है । मैं समझता हूं कि अंग्रेजी एक बहुत अच्छी भाषा है जैसे और भाषायें हैं । फिर भी बहुत समय पहले से ही मेरी यह धारणा है कि भारतीय जनता का वास्तविक उत्थान और उसकी जागृति अंग्रेजी द्वारा नहीं हो सकती । यह बात मेरे लिये आज से ही नहीं अपितु ४०–४५ वर्ष पहले से, जब से मैं इस देश में लोक-कार्य में प्रवृत हुआ हूं, स्पष्ट है । सभा को याद होगा, कम से कम बहुत से सदस्य जिन्होंने उस समय भाग लिया था जानते होंगे, कि जब हमने जन-सम्पर्क के कार्यों में फ्राक, कोट, टोप और अंग्रेजी भाषा को तिलांजलि दे दी थी तब हमारे लोक कार्यों और आंदोलनात्मक कार्यों में कितना महान अन्तर आ गया था । वह अन्तर अत्यन्त आश्चर्यजनक था । पहले हम कांग्रेस के अधिवेशन में और अन्य दूसरी बैठकों में अंग्रेजी में ही बोलते थे, किन्तु हमारी पहुंच जनता तक नहीं हो पाती थी । यह बात बिल्कुल स्पष्ट है और इसमें तर्क करने की भी गुंजाइश नहीं कि कोई भी देश किसी ऐसी भाषा के द्वारा ही जो जनता के दिलों और दिमागों में गहरी जड़े जमा चुकी है, अपने विशिष्टत्व को बनाये रख सकता है तथा जन-भावनाओं का विकास कर सकता है । उस समय के पश्चात् मेरा यही विश्वास रहा है कि हम केवल भारतीय भाषाओं के माध्यम से ही ऐसा कर सकते हैं । इसका अंग्रेजी को त्यागने से कोई सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि यह अत्यन्त महत्वपूर्ण भाषा है, और यह १० वर्ष का ही प्रश्न नहीं है अंग्रेजी भाषा भारत में एक लम्बे समय तक किसी न किसी रूप में बनी रहेगी । मैं बार-बार ऐसा कहता हूं । मैं यह तो नहीं जानता इसका वास्तविक स्वरूप क्या होगा चाहे अन्तर्राष्ट्रीय हो अथवा अन्यथा किन्तु इसके बने रहने से ही हमारी भाषाओं को शक्ति मिलेगी । यद्यपि यह तर्क कुछ विचित्र सा है ।

---

†मूल अंग्रेजी में

हमारी भाषायें बहुत अच्छी और अत्यन्त प्राचीन हैं। संभवतः श्री फ्रैंक एन्थनी ने यह कहा था कि यह ५० वर्ष पुरानी हैं। यह बात सुनकर मुझे आश्चर्य हुआ था।

†**श्री फ्रैंक एन्थनी** : मैंने श्री सुनीति कुमार चटर्जी का उद्धरण पढ़ कर सुनाया था।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : हमारी अधिकांश भाषायें, बंगाली, गुजराती, मराठी आदि और दक्षिण की भाषायें तामिल, तेलगू, कन्नड़, मलयालम हर दृष्टिकोण से महान है। इन भाषाओं में उत्कृष्ट पुस्तक लिखी गई हैं, जिन्होंने लोगों के मन में स्थान बना लिया है। इस विषय में कोई संदेह नहीं।

जहां तक तामिल का प्रश्न है वह संस्कृत जितनी ही पुरानी है। दक्षिणी भाषाओं के अतिरिक्त उत्तराखंड की भाषाओं का उद्भव भी संस्कृत से ही हुआ हैं और वह संस्कृत की ही पुत्री हैं। कुछ सीमा तक अन्य भाषायें भी उसी मूल भाषा से उत्पन्न हुई हैं तथा उसके अत्यधिक सन्निकट और उससे प्रभावित हैं। वस्तुतः यह विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि संस्कृत ने अनन्य रूप से तो नहीं किन्तु अधिकतर भारतीय विचारधारा, संस्कृति और परंपरा का निरूपण किया। मैं संस्कृत का अधिक ज्ञान नहीं रखता, तथापि मैं इसका प्रशंसक हूं।

मेरा विचार है कि यदि कभी भारत में संस्कृत मृत भाषा बन गई तो यह दुर्भाग्य की बात होगी। इससे हमारे सारे विश्वासों और मान्यताओं को क्षति पहुंचेगी। दुर्भाग्यवश हम संस्कृत को भारत में काम-काज की भाषा नहीं बना सकते। यह बात स्पष्ट है। मैं यथासाध्य संस्कृत की शिक्षा को प्रोत्साहन देना चाहूंगा, किन्तु यह सर्वसाधारण की भाषा नहीं बन सकती। २००० वर्ष पूर्व प्राकृत भाषा का उद्भव होते समय यह सामान्य जीवन से पृथक हो गई थी। यह विद्वानों की भाषा बन गई थी और प्राकृत का विकास होने लगा था किन्तु यह हमारी वर्तमान भाषाओं के लिये एक प्रकार का आधार, अथवा नींव प्रस्तुत करती है, उन्हें शक्तिशाली और गहन बनाती है और यही हमें चाहिये भी।

यदि यहां २–३ भाषायें ही होतीं तो मैं यही चाहता कि स्विटजरलैंड, कनाडा और फिनलैंड के समान यहां भी उन सभी भाषाओं को राष्ट्रभाषायें बना दिया जाय। फिनलैंड में १० प्रतिशत जनता स्वीडिश है फिर भी इस भाषा को राष्ट्रभाषा बना दिया गया है।

भाषाओं के संबंध में हमें बहुत सावधान और यथाशक्ति उदार होना चाहिये। किसी भाषा का दमन करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये। किसी पर दूसरी भाषा लादने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये। जब भी ऐसा किया गया है मुसीबतें उठ खड़ी हुई हैं। इसके कई उदाहरण हैं। इसलिय संविधान में उल्लिखित सभी भाषाओं को हम ऐसी भाषायें नहीं बना सकते जिन्हें हर एक जाने और दिन प्रतिदिन के प्रयोग में लाये। संविधान के बनाने वालों ने समस्त १३ या १४ भाषाओं को समानता का दर्जा देकर बहुत बुद्धिमानी का कार्य किया है। मैं यह स्पष्ट कर देना चहता हूं कि बंगाली और तामिल भी उसी प्रकार राष्ट्र भाषायें हैं जिस प्रकार कोई अन्य भाषा। इसलिये इन सब १३–१४ भाषाओं को प्रोत्साहन देना हमारा कर्तव्य हो जाता है।

किन्तु मैं उन सदस्यों की इस बात से असहमत हूं जिन्होंने यह कहा कि पिछले वर्षों में हिन्दी को प्रोत्साहन नहीं दिया गया। मेरा विचार है कि पिछले १५ वर्षों में हिन्दी का

†मूल अंग्रेजी में

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

काफी विकास हुआ है । हिन्दी ही नहीं अपितु सभी भारतीय भाषाओं का विकास पिछले १५ वर्षों में इतना अधिक हुआ है जितना इस कालावधि में विश्व में अन्यत्र कहीं नहीं हुआ । यह बहुत महत्वपूर्ण बात है । मैं साहित्य अकादमी का अध्यक्ष होने के नाते, जो इन सब भाषाओं के विषय में कार्य करती है, कुछ अनुभव और विश्वास के आधार पर ही ऐसा कह रहा हूं । साहित्य अकादमी द्वारा इन भाषाओं में, जिनमें हिन्दी भी सम्मिलित है, हजारों पुस्तकें प्रकाशित की गई हैं । एक से दूसरी भाषाओं में हजारों अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं । आज हमारी सभी भाषायें जीवित और प्रगतिशील हैं । लोग समझते हैं कि भाषा का विकास तभी होता है जब कोई क्लर्क इसका प्रयोग करे जैसे भाषा का सम्पूर्ण जीवन इसी एक बात में निहित है । यह भाषा का एक भाग अवश्य है और इसका इस रूप में प्रयोग किया जाना आवश्यक भी है, किन्तु अभी तक किसी भी क्लर्क, अथवा विभाग अथवा सरकार द्वारा किसी भी भाषा का विकास नहीं किया गया है । भाषा को विकसित करने के अन्य कई कारण हैं । इसके उपरान्त भी कि हमारा प्राचीन साहित्य अत्यन्त उत्तम है और कुछ पुस्तकें अत्यन्त उत्कृष्ट हैं इस तथ्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि हमारी भाषाओं का विकास कुंठित हो गया है । इसका कारण यह है कि यह वर्तमान जीवन और अर्वाचीन विचारधाराओं का निरूपण नहीं करतीं । वह हमारी प्राचीन परम्परा का निरूपण करती है । १९वीं शताब्दी में हमारी भाषाओं को अंग्रेजी का मुकाबला करना पड़ा था यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से नहीं । अंग्रेजी यहां पर हमारी सद्भावनाओं के कारण नहीं आई किन्तु फिर भी यह आ ही गई और यह विज्ञान और प्रौद्योगिकी की ही नहीं अपितु और अन्य बातों के विषय में भी विचारों को प्रकट करने का साधन बन गई । अंग्रेजी के प्रभाव के कारण ही १९ वीं शताब्दी के बाद हमारी भाषाओं का विकास आरम्भ हुआ । इनका साहित्य रूप भी बहुत कुछ बदल गया । अत्यन्त उत्कृष्ट काव्यों, महाकाव्यों और गद्य साहित्य की रचना की गई । अब भी यद्यपि हमारी भाषाओं का काफी विकास हो चुका है, तथापि अंग्रेजी के प्रभाव से इसका भविष्य में भी काफी विकास होगा । इस सीमित दृष्टिकोण से भी यह उचित ही है । कि हमारी भाषायें विदेशी भाषाओं के निकट सम्पर्क में रहें । और वह रूसी हो या फ्रेंच या जर्मन, इटालियन, स्पेनिश आदि । किन्तु सबसे आसान बात अंग्रेजी से सम्पर्क स्थापित करना ही है । इसलिये हमारी भाषाओं के विकास के लिये और उन्हें प्रगतिशील बनाने के लिये यह आवश्यक है कि यह सम्पर्क स्थापित किये जायें । मैं यह बात इसलिये कह रहा हूं कि इन सम्पर्कों के प्रभाव को बहुत कम लोग अनुभव करते हैं । इस देश में भाषा तथा जीवन के अन्य पहलुओं पर प्रभाव डालने वाली सबसे हानिकारक बात यही हुई है कि सैकड़ों वर्षों तक हम कूपमंडक बने बाहरी दुनिया की बातों से बेखबर रहते रहे ।

इस युग के प्रारम्भिक दिनों में भारत शेष दुनिया से पृथक् नहीं था । बुद्ध के समय यहां के लोग बाहर जाते थे और बाहर के साहित्यिक तथा अन्य लोग भी यहां आते थे । किन्तु शनैः शनैः लगभग १००० वर्ष भारत अधिकाधिक आने तक ही सीमित रहने लगा । हो सकता है, इसका कारण यह रहा हो कि हम आत्म दर्शन के सिद्धान्तों में विश्वास करते थे । इसलिये हमारा बाहर से सम्पर्क समाप्त हो गया, हम बाहर की बातों से अनभिज्ञ रहने लगे । उसका प्रभाव हमारी भाषा पर भी पड़ा, क्योंकि भाषा इस बात को ही बताने का माध्यम है कि लोग क्या हैं । हमारा जीवन अवरुद्ध होने के कारण हमारी भाषा भी अवरुद्ध हो गई । भारत में अंग्रेजों के बाद ही भाषाओं को गति मिली । अंग्रेजों के साथ ही यहां कई बातों की जानकारी, विज्ञान, प्रोद्योगिकी, लघु कथा, नये नाटक, उपन्यास आदि,के विषय में हुई ।

इस समय हमें यह बात स्वीकार कर लेना है कि भारत एक बहुभाषी देश है। यह कहने का क्या अर्थ है कि भारत के ४४ करोड़ लोग हिन्दी जानते हैं? भारत में कई भाषायें हैं यद्यपि उत्तराखण्ड की भाषायें संस्कृत के अधिक निकट सम्पर्क में हैं, जबकि दक्षिण की भाषायें नहीं है फिर भी संस्कृत से उनका सम्बन्ध तो है ही। दूसरी बात यह है कि हमें जन-भाषा द्वारा ही देश का विकास करना है। मैं यहां तक चाहता हूं कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी की उच्च शिक्षा अंग्रेजी के ही माध्यम से दी जाये, तथा हमारे स्कूलों में विज्ञान की शिक्षा का प्रसार करने के लिये भी यह आवश्यक है कि इसे राष्ट्रीय भाषाओं में ही पढ़ाया जाये क्योंकि अन्यथा आप लोगों द्वारा इसके पूर्ण रूप में समझने में बाधा डालेंगे। यह फैलेगी नहीं। उच्च प्रक्रम पर पहुंचने पर, गवेषणा आदि कार्यों में, एक नहीं वरन् कई विदेशी भाषायें उपयोगी सिद्ध होंगी।

†**श्रीमती रेणु चक्रवर्ती** (बैरकपुर) : कठिनाई यह है कि उपकुलपति इससे सहमत नहीं होते।

†**शिक्षा मंत्री (डा० का० ला० श्रीमाली)** : वह सहमत हो गये हैं।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : हमें इस मामले पर हिन्दी और अंग्रेजी को एक दूसरे का विरोधी मान कर विचार नहीं करना चाहिए। वह दृष्टिकोण गलत है। हमें प्रत्येक भाषा का प्रयोग उसके उचित क्षेत्र में करना है। राष्ट्रीय भाषा के क्षेत्र में केवल राष्ट्रीय भाषाओं का ही स्थान है। इसमें सन्देह नहीं कि सभी १४ राष्ट्रीय भाषाओं का अपना अपना स्थान है। आप अंग्रेजी भाषा की चर्चा इस प्रसंग में नहीं कर सकते, अन्य कई प्रसंगों में इसकी चर्चा भले ही हो सकती है। आप कह सकते हैं जैसाकि मैं भी कहता हूं, कि स्कूलों में अंग्रेजी अनिवार्य होनी चाहिए, दूसरी भाषा होनी चाहिए, अथवा विदेशी भाषा के रूप में होनी चाहिए; और यह कि विदेशों के साथ सम्पर्क की दृष्टि से इसका प्रयोग होना चाहिए, वैज्ञानिक और तकनीकी कार्यों के लिये इसे रहना चाहिए। यह सब ठीक है। परन्तु यह हमें मानना पड़ेगा कि हिन्दुस्तान के आम लोगों के विचारों अथवा भावनाओं के उद्भव के लिये अंग्रेजी भाषा उपयुक्त नहीं हो सकती। उसके लिये तामिल, हिन्दी, बंगला अथवा मराठी आदि भारतीय भाषायें ही उपयुक्त हो सकती हैं।

इन सभी हिन्दुस्तान की भाषाओं ने पिछले १५ वर्षों में सराहनीय प्रगति की है। कुछ भाषाओं ने पहले ही प्रगति की थी, परन्तु इस कालावधि में विशेषकर काफी प्रगति की है। मैं इस बात का पूर्ण रूप से खण्डन करता हूं कि इन भाषाओं ने विकास नहीं किया। आप सरकार की क्रियाओं की आलोचना कर सकते हैं। सरकार और अधिक सहायता इस मामले में कर सकती थी। मैं समझता हूं कि आप कार्यालयों और क्लर्कों के बारे में सोच रहे हैं। परन्तु भाषा कार्यालयों और क्लर्कों की सीमाओं से बहुत परे की चीज है। आप उर्दू का उदाहरण लीजिये। मोटे तौर पर कहा जा सकता है कि उर्दू को किसी प्रकार से कोई खास प्रोत्साहन नहीं दिया गया है, इसके बावजूद भी इस भाषा में इस कदर गतिशीलता पाई जाती है कि इसका विकास हिन्दुस्तान की अन्य भाषाओं की तुलना में कहीं अधिक गति से हो रहा है। इस भाषा में प्रकाशित पुस्तकें, नाटक, कहानियां और अन्य साहित्यक कृतियां इस तथ्य की द्योतक हैं। इसका कारण यह है कि यह एक गतिशील भाषा है। मैं समझता हूं कि यदि हिन्दी को अधिक तीव्रगति से विकास करना है तो इसे शब्द भण्डार आदि में उर्दू के साथ अधिक से अधिक सम्बन्ध स्थापित करने चाहिएं। अपनी विशेषताओं को बनाये रख कर इसे उर्दू भाषा से गतिशीलता मिलेगी। उर्दू क्यों एक जानदार भाषा है इसके कई कारण हैं एक कारण यह है इसमें लचकीलापन है और अन्य भाषाओं से ग्रहण करने की बड़ी क्षमता है। वास्तव में उर्दू भाषा में हिन्दी की तुलना में अंग्रेजी भाषा की अधिक देन है। इसके अतिरिक्त उर्दू ने फारसी, अरबी और तुर्की आदि भाषाओं से बहुत कुछ ग्रहण किया है। मैं यह नहीं सुझा रहा हूं कि हिन्दी को भी उन्हीं भाषाओं से ग्रहण करना चाहिए।

---

†मूल अंग्रेजी में

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

मैं केवल यह बताना चाहता हूं कि यह उर्दू का लचकीलापन है जो उसे शक्ति प्रदान करता है। अनम्यता से भाषा में दुर्बलता आती है। दुर्भाग्यवश, कुछ समय से हिन्दुस्तान में भाषा के सीमित दायरे में रहने और प्राचीन संस्कृत अथवा पाली से शब्द लेने की प्रवृत्ति देखी गई है, जो प्रवृत्ति सहायक सिद्ध नहीं हो सकती। इसका कारण यह है कि यह जो शब्द आप बनाते हैं इन के पीछे कोई वास्तविकता नहीं है, कोई भावना नहीं है और कोई इतिहास नहीं है। यदि आप शब्दकोश में देखें तो प्रत्येक शब्द के पीछे एक इतिहास मिलेगा। एक भाषा का दूसरी भाषा में वास्तविक अनुवाद असम्भव है क्योंकि एक शब्द के ऐतिहासिक सम्बन्धों का अनुवाद नहीं हो सकता। एक शब्द का कहां प्रयोग किया गया है और किस प्रकार प्रयोग किया गया है इस सम्बन्ध में कठिनाई आती है। आप कुर्सी अथवा टेबल का अनुवाद तो कर सकते हैं। इनके लिये कोई न कोई समान शब्द मिल जायगा। परन्तु ज्योंही आप किसी जटिल विचार में जाते हैं आप उसका अनुवाद नहीं कर सकते। आप उसका भावार्थ बेशक बता दें। इसका कारण यही होता है कि एकभाषा की पृष्ठभूमि अपनी होती है। जैसे चीनी भाषा की वर्णमाला भी नहीं है। यह एक तस्वीरों की भाषा है। क्योंकि मैंने स्वयं अनुवाद करने का प्रयत्न किया है इसलिये पत्रकार लोग जिस तेजी से अनुवाद करते हैं मुझे उस पर आश्चर्य होता है। और वह अनुवाद बहुत कम ठीक होता हैं। इस से भाषा का विकास नहीं हो सकता।

इसमें सन्देह नहीं कि हमें अपनी प्रादेशिक भाषाओं का विकास करना है। मैं इस समय एक क्षण के लिये हिन्दी को भी प्रादेशिक भाषा कह रहा हूं। हमें इस दिशा में सब कुछ करना है। मुझे इसमें सन्देह नहीं है कि राज्य शिक्षा, प्रशासन, आदि सम्बन्धी अधिक से अधिक कार्य प्रादेशिक भाषाओं में करेंगे।

वास्तविक कठिनाई इससे पहले प्रक्रम पर पेश आती हैं। इन प्रादेशिक भाषाओं में सम्पर्क स्थापित करने वाला सूत्र कौनसा है? इस मामले पर हम इस समय चर्चा कर रहे हैं। अब तक यह सूत्र अंग्रेजी भाषा रहा है। वास्तव में, यह केवल सम्पर्क का सूत्रमात्र न होकर प्रदेशों में स्वयं प्रयोग में लाई जाने वाली भाषा रही है। अब हमें क्या करना है? यह बात केवल अंशतः आपके और मेरे बस की है पूर्णतः नहीं।

हम सब जानते हैं कि अंग्रेजी का स्तर गिर रहा है, इसलिये नहीं कि हिन्दी और अंग्रेजी में संघर्ष हो रहा है वरन् इसलिये कि उभरती हुई प्रादेशिक भाषाओं और अंग्रेजी में संघर्ष हो रहा है। मैं समझता हूं कि भविष्य में वर्तमान की तुलना में अंग्रेजी के ज्ञाता हिन्दुस्तान में अधिक होंगे। परन्तु इने गिने व्यक्तियों को छोड़ कर, आपको भूतकाल के समान भविष्य में ऐसे लोग नहीं मिलेंगे जो अपने अंग्रेजी भाषा के ज्ञान पर गर्व महसूस करें। जैसा कि श्री मुकर्जी ने कहा कि अंग्रेजी भाषा के सम्बन्ध में कुछ दृढ़ीकोण था जो अब भी काफी हद तक है। इसमें सन्देह नहीं है कि अंग्रेजी भाषा के बारे में कुछ निहित स्वार्थ पैदा किये गये हैं। दृढ़ीकरण और निहित स्वार्थ दोनों बुरी बातें हैं। क्योंकि इससे स्वभावतः हम अंग्रेजी न जानने वालों से अलग हो जाते हैं। हम जानते हैं कि स्वतन्त्रता से पूर्व क्या स्थिति थी। इस देश में उस समय अंग्रेजी जानने वालों की एक कट्टर जाति थी जिनके कपड़े अंग्रेजों के से होते थे, रहन सहन उनके समान था और वह अंग्रेजी भाषा जानते थे। वह एक कट्टर जाति थी। हमारे सभी प्रशासक और हम में से भी कई लोग उसी जाति के थे। वह बहुत बुरी बात थी क्योंकि उससे हमारे और देश की जनता के बीच एक कड़ी दीवार खड़ी हो गई थी। हम में से बहुत लोगों ने उस जाति को छोड़ दिया। मैं बातों को अधिक महत्व नहीं देता, परन्तु यह इस दृष्टि से महत्वपूर्ण बात है कि इससे बीच की दीवार हट जाती है। हम ने उस पहनावे को छोड़ा और वह कपड़े पहनने आरम्भ किये जो भारतीय पहनावे के अनुसार थे। इससे हम जनता के निकट आये। यह एक स्पष्ट बात है कि मैं एक गांव

में अंग्रेजी कपड़े पहन कर जाता हूं तो मैं उन लोगों से और भी दूर हो जाता हूं। जैसी स्थिति अब है मैं कई बार प्रकार से उनसे दूर हूं। परन्तु यदि मैं विदेशी कपड़ों में उनके पास जाता हूं तो उनसे और भी दूर हो जाऊंगा। यदि मैं उनसे के पास जाकर अंग्रेजी भाषा में बात करता हूं तो मैं अपने आपको तो सन्तुष्ट करूंगा परन्तु उससे किसी और को सन्तोष नहीं होगा। यह जो हमारे और हमारी जनता के बीच दीवारें हैं हमें इन्हें हटाना है। गांधी जी के आन्दोलन को जो बड़ी सफलता प्राप्त हुई वह यह थी कि हमने इन दीवारों को हटा दिया। वह प्रक्रिया अभी समाप्त नहीं हुई।

इन सब बातों को देख कर परिणाम यह निकलता है कि हम अपनी राष्ट्रीय भाषाओं द्वारा ही प्रगति कर सकते हैं। राष्ट्रीय भाषायें वहीं हैं जिन का वर्णन संविधान की अनुसूची में किया गया है। हम इन में से किसी भाषा का दमन नहीं कर सकते और किसी एक भाषा को किसी पर लाद नहीं सकते, क्योंकि लादने से उस की वैसी ही प्रतिक्रिया होती है जो स्वयं लादी जाने वाली भाषा के लिये नुक्सान-देह है। फिर अन्य भाषाओं में भी विरोध होने लगता है। भारत का विकास भाषा के दृष्टिकोण से विभिन्न भाषाओं के सहयोग से हो सकता है न कि उन के आपसी संघर्ष से। वह एक दूसरे के काफी निकट हैं। मैं अनुवाद की चर्चा कर रहा था। एक भारतीय भाषा से दूसरी भारतीय भाषा में अनुवाद करना अपेक्षतया आसान है क्योंकि उन के पीछे जो विचार हैं वह प्रायः एक से हैं और भाषा इतनी अधिक कठिन भी नहीं है। फलतः हम अनुवाद आसानी से कर सकते हैं। इसलिये हमें सभी भाषाओं को एक साथ लेना है। एक समस्या शेष है कि इन में आपसी सम्पर्क के लिये सूत्र क्या हो, हमारे संविधान ने केन्द्र के लिये तथा सरकारी काम काज के लिये इस प्रयोजनार्थ हिन्दी का सुझाव दिया है। आप इन शब्दों को याद रखिये "केन्द्र तथा सरकारी कार्य"।

यह स्पष्ट है कि यदि हम अंग्रेजी को सम्पर्क के लिये सूत्र अधिक समय तक बनाये रखना नहीं चाहते तो यह अवश्यम्भावी है कि हमें हिन्दी को प्रयोग में लाना है, यह इसलिये नहीं कि हिन्दी भाषा बंगला, मराठी अथवा तामिल से उत्कृष्ट है। ऐसा कोई नहीं कहता। हो सकता है कुछ मामलों में यह उत्कृष्ट हो, परन्तु यह भी हो सकता है कि कुछ अन्य मामलों में यह उत्कृष्ट न हो। परन्तु हिन्दी का प्रयोग इसलिये करना है कि यह इस प्रयोजन के लिये आसान है और इस का प्रयोग बहुत लोगों द्वारा किया जाता है; और इस का प्रयोग बढ़ रहा है। मैं समझता हूं कि हिन्दी के प्रयोग में लाने सम्बन्धी जो भी कार्यवाही शिक्षा मंत्री द्वारा की गई उस से कहीं अधिक काम इस सम्बन्ध में सिनेमा ने किया। यह सब कुछ हमारे सामने हो रहा है और यह बात मानी हुई है। यद्यपि मुझे इस में आपत्ति नहीं होगी यदि यह आदेश निकाल दिया जाय कि कल से इस कार्यालय में हिन्दी का प्रयोग हो, परन्तु इस से हिन्दी का प्रचलन बढ़ेगा नहीं। इन आदेशों से कहीं अधिक कार्य सिनेमा करते हैं ताकि हम हिन्दी को सम्पर्क कीभाषा के रूप में मान सकें। मैं समझता हूं कि अंग्रेजी को हम अधिक समय के लिये नहीं रख सकते।

कुछ समय पूर्व मैं ने कहा था कि मैं चाहता हूं कि कई प्रकार के कार्यों के लिये अंग्रेजी का प्रयोग में लाते रहना आवश्यक है, और मैं आशा करता हूं कि यह जारी रहेगी, और किसी सीमा तक यह विचारकों और लेखकों, व्यक्तिगत विचारकों, साहित्यकारों और सरकारी कर्मचारियों में भी सम्पर्क की भाषा बनी रहेगी। इस में मुझे आपत्ति नहीं है। परन्तु साधारण सम्पर्क की भाषा अंग्रेजी नहीं हो सकती।

इसलिये, साधारण सम्पर्क की भाषा एक भारतीय भाषा को ही बनना है और सभी भारतीय भाषाओं में हिन्दी भाषा सब से आसान है। इस भाषा के बारे में मेरा केवल इतना ही दावा है। इसीलिये हमारी संविधान सभा में निर्णय किया गया था और ऐसा निर्णय लेना समझदारी थी कि केन्द्रीय काम काज के लिये हिन्दी का ही प्रयोग होना चाहिए।

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

इस समय, मैं समझता हूं कि बहुत से लोग इस में सहमत हैं कि हिन्दी प्रशासन के काम काज के लिये पर्याप्त सीमा तक विकसित नहीं है। लोग कहते हैं कि यह इस कारण आज विकसित नहीं है क्योंकि सरकार ने इस की सहायता नहीं की अथवा इसे काफी प्रोत्साहन नहीं दिया। इस में कुछ सच्चाई भी हो सकती है। परन्तु मैं नहीं समझता कि इस सरकार द्वारा सहायता न दी जाने वाली बात में अधिक सच्चाई है, वास्तव में इस के कारण अधिक गहरे है। लोग समझते है कि भाषा का विकास जादू से हो सकता है, परन्तु वास्तव में यह समस्या अधिक गहरी है। विशेषतया जब यह एक भाषाभाषियों का दूसरे भाषाभाषियों से विरोध का प्रश्न बन जाय तो यह और भी कठिन हो जाता है। हमें बहुत सावधानी से बढ़ना है। यद्यपि शब्दकोष तैयार किये गये और किये जाते रहेंगे परन्तु यह केवल शब्दकोष तैयार करने का प्रश्न नहीं है। यह प्रश्न इस से कहीं बड़ा है।

एक भाषा को सम्बद्ध विषय सम्बन्धी विचारधारा के अनुसार चलना होता है। आप पुस्तक लिख सकते हैं और तकनीकी पुस्तकों के अनुवाद हो रहे हैं, परन्तु ज्योंही आप इस से परे जाते हैं आप के अनुवाद आडम्बरपूर्ण हो जाते हैं; उन के पीछे इतिहास नहीं होता; प्रयुक्त शब्दों के पीछे इतिहास नहीं होता। विज्ञान और तकनीकी ज्ञान के प्रसंग में जो शब्द प्रयुक्त होते हैं उन का इतिहास समकालीन है। यह सब बातें मार्ग में आती हैं।

इसीलिये यह सुझाव दिया गया है कि सभी वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्द अन्तर्राष्ट्रीय प्रचलन के अनुसार होने चाहिएं, केवल हिन्दी में ही नहीं वरन् सभी भारतीय भाषाओं में। ऐसा करने से दो लाभ होंगे एक तो भारतीय भाषायें एक दूसरे के निकट आयेंगी, दूसरे, वैज्ञानिक तथा तकनीकी मामलों में आप संसार की विचारधारा के निकट होंगे। यह दोनों महत्वपूर्ण हैं। इस से वैज्ञानिक कार्यों आदि के लिये आप किसी अन्य भाषा को आसानी से सीख सकेंगे। यह कहना कि हिन्दी ने प्रगति नहीं की है बिलकुल अज्ञानता की बात है। हिन्दी, बंगला और तामिल आदि सभी भाषाओं ने प्रगति की है। नयी विचारधारा और नये दृष्टिकोण के बारे में सभी भाषाओं में जितना कुछ लिखा गया है उसे देख कर मुझे आश्चर्य होता है इसी को हम भाषा की प्रगति कह सकते हैं और यह हो रही है।

इसलिये आप चाहे एक भाषा को अच्छा समझिये चाहे दूसरी भाषा को, परन्तु हम इन तीन-चार भाषाओं की अवहेलना नहीं कर सकते।

हिन्दुस्तान एक बहुभाषा-भाषी देश हैं। ऐसा होते हुए भी इन भाषाओं में आपसी संबंध है, वह एक दूसरे से पूर्णतया भिन्न नहीं हैं। आप किसी अन्य भारतीय भाषा का आसानी से ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं और ऐसा करने का प्रयत्न भी करना चाहिए। हम ने त्रै-भाषा सूत्र का सुझाव दिया है। बहुत से लोगों को अंग्रेजी और अपनी प्रादेशिक भाषा के अतिरिक्त किसी भारतीय भाषा का भी ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। ज्यों ज्यों यह प्रवृत्ति बढ़ेगी भाषायें एक दूसरे के अधिक निकट आयेंगी और जो अन्तर भारतीय भाषाओं में आज पाया जाता हैं वह कम होगा। परन्तु विभिन्न प्रदेशों में सम्बद्ध भाषाओं का विकास होना आवश्यक है। इसके लिये प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

सम्पर्क भाषा का स्थान केवल हिन्दी ही ले सकती हैं। परन्तु केवल कहने मात्र से अथवा संविधान में लिखे जाने से यह सम्पर्क भाषा नहीं बन जायेगी। उस के लिये हिन्दी भाषा में प्रगति होना आवश्यक है। आज यह सम्पर्क भाषा बनने के लिये प्रर्याप्त रूप में विकसित नहीं है। यह तीव्र गति से विकसित हो रही है और इस प्रक्रिया को प्रोत्साहित करना चाहिए। और जब इस प्रक्रिया को प्रोत्साहन दिया जा रहा है तो यह आवश्यक और अवश्यम्भावी है कि अंग्रेजी सम्पर्क

भाषा बना रहे। क्योंकि इस प्रक्रिया में समय लगेगा इसलिये आप एक तिथि निर्धारित नहीं कर सकते कि अमुक तिथि से अंग्रेजी हटा दी जायेगी और हिन्दी उसका स्थान ले लेगी। इस प्रक्रिया में हिन्दी को अधिक से अधिक लोग सीखेंगे और यह अधिकाधिक प्रयोग में लाई जायेगी, और साथ ही साथ अंग्रेजी का प्रयोग कम होता जायेगा। यही प्रक्रिया मेरे सामने है।

इस क्रमिक परिवर्तन में तिथियों का इसके सिवाये और कोई महत्व नहीं होता कि समय-समय पर स्थिति का निरीक्षण किया जाय और यह देखा जाय कि हम सही मार्ग पर चल रहे हैं अथवा नहीं। यह महत्वपूर्ण बात है कि हम अपनी कार्यवाहियों का निरीक्षण करें और उन्हें एक दिशा की ओर लगाये।

इस दृष्टि से, मेरे द्वारा दिये गये आश्वासनों के अतिरिक्त भी, यह आवश्यक है कि अंग्रेजी का प्रयोग सहभाषा अथवा अतिरिक्त भाषा के रूप में प्रयोग होता रहे। वास्तव में देश की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक है कि इसका प्रयोग जारी रहे। यदि आप इसका प्रयोग नहीं करेंगे तो केवल एक अन्तर ही पैदा नहीं होगा वरन् कई दिशाओं में देश का विकास भी रुक जायेगा, क्योंकि उस प्रकार का विकास हिन्दी भाषा के माध्यम से नहीं हो सकता।

इसलिये इस विधेयक का उद्देश्य संविधान द्वारा खड़ी की गई उस अड़चन को दूर करना है, जो अड़चन तिथि सम्बन्धी है। इससे अंग्रेजी का प्रयोग होता रहेगा, यह कितने समय तक होता रहेगा इस विषय में मेरे लिये ठीक-ठीक और निश्चयपूर्वक बताना कठिन है।

परन्तु हमें प्रादेशिक भाषाओं में प्रगति करनी है और हिन्दी को केवल प्रादेशिक भाषा के रूप में ही नहीं वरन् सम्पर्क भाषा के रूप में भी प्रगति करनी है, और साथ-साथ अंग्रेजी का प्रयोग भी किया जाना है ताकि कोई अन्तर पैदा न हो। और धीरे धीरे यह प्रक्रिया स्वभावत: एक रूप ले लेगी। सरकारी निर्णयों के होते हुए भी यह शक्तियां काम कर रही हैं। आप इस प्रक्रिया की गति बढ़ायें अथवा कम करें परन्तु यह प्रगति रुक नहीं सकती। परन्तु यह मैं अवश्य समझता हूं कि हमें अंग्रेजी भाषा से नहीं, चूंकि अंग्रेजी भाषा बहुत लाभदायक है, बल्कि इस भाषा के बारे में जो दृढ़ता हमारे दिलों में पाई जाती है उस से छुटकारा अवश्य पाना है। मैं समझता हूं कि यह दृढ़ता बुरी है क्योंकि यह हमें देश के अन्य लोगों से अलग करती है।

एक अन्य बात भी है। गृह-कार्य मंत्री ने भी यह बात कही है कि १० वर्ष पश्चात् जो समिति बनाई जायगी उस के प्रतिवेदन को राज्य सरकारों के विचारार्थ भेजा जायेगा, और जल्दबाजी नहीं की जायेगी। इस प्रकार किसी पर कोई बात लादने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता क्योंक ऐसा प्रयास बेकार होगा। जितना आप किसी बात के लादने का प्रयत्न करेंगे उतनी ही अड़चन बढ़ेगी। इस प्रकार के प्रश्न को अनुमति और परामर्श से ही हल किया जा सकता है।

†**श्री फ्रैंक एन्थनी :** जब संसदीय समिति के प्रतिवेदन पर विचार हो रहा था तो मैं एक संशोधन प्रस्तुत करना चाहता था परन्तु अध्यक्ष महोदय ने कहा कि संसद् उस प्रतिवेदन में परिवर्तन नहीं कर सकती। इस प्रकार उस प्रतिवेदन को राज्य सरकारों के पास भेजने का क्या लाभ होगा ?

†**श्री जवाहरलाल नेहरू :** प्रतिवेदन में परिवर्तन आप कैसे कर सकते हैं।

†**श्री फ्रैंक एन्थनी :** तो यह सिफारिशें संसद् द्वारा की जानी चाहियें।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू :** संसद् स्वतंत्र रूप से सिफारिश कर सकती है परन्तु यह प्रतिवेदन में परिवर्तन नहीं कर सकती।

---

†मूल अंग्रेजी में

†**श्री त्रिदिब कुमार चौधरी** (बरहामपुर) : यदि आप कहते हैं कि उस समिति के प्रतिवेदन को राज्य सरकारों के विचारार्थ भेजा जायेगा तो इस सम्बन्ध में इस विधेयक में उपबन्ध क्यों नहीं रखते ?

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : मैं नहीं समझता कि इस बारे में कोई कठिनाई होगी । मेरे सहयोगी, गृह-कार्य मंत्री इस बारे में चर्चा करेंगे । परन्तु इस समस्या के प्रति दृष्टिकोण परामर्श और समझौते का होना चाहिये ।

मैं ने जो आश्वासन दिया था कि हिन्दी अथवा अंग्रेजी के बारे में कोई परिवर्तन अहिन्दी भाषी लोगों के समर्थन के बिना नहीं किया जायेगा उसका प्रयोजन यह था कि इस प्रकार की शंका नहीं होनी चाहिये कि संसद् में बहुमत होने के कारण कोई ऐसा परिवर्तन किया जायेगा जिस के लिये उनका समर्थन प्राप्त न हो । मेरे आश्वासन के अतिरिक्त भी वास्तव में ऐसा करना सम्भव नहीं है क्योंकि इसके परिणामस्वरूप ऐसी समस्यायें खड़ी होंगी और ऐसी कठिनाइयां उत्पन्न होंगी कि कोई भी सरकार ऐसा करना नहीं चाहेगी । यही प्रयोजन था ।

†**श्री फ्रैंक एन्थनी** : परन्तु पिछली बार आप ने संसद् को अपंग बना दिया था और पश्चिम् बंगाल तथा मद्रास की विधान सभाओं में एकमत से पारित संकल्पों को अपंग बना दिया । **(अन्तर्बाधायें)**

कुछ माननीय सदस्य : नहीं, नहीं ।

†**श्री फ्रैंक एन्थनी** : ठीक इस प्रकार से हुआ था ।

†**श्री त्यागी** : तब भी अंग्रेजी है । **(अन्तर्बाधायें)**

†**श्री स० मो० बनर्जी** : दुर्भाग्यवश फ्रैंक एन्थनी स्पष्ट बात नहीं करते है **(अन्तर्बाधायें)**

†**अध्यक्ष महोदय** : यह ठीक नहीं है ।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : कोई भी व्यक्ति प्रत्येक बात का उल्लेख नहीं कर सकता ।

एक भाषा की दूसरी भाषा से टक्कर का जो मुख्य प्रश्न है वह सलाह और सामान्य रूप से ही निर्धारित किया जा सकता है ।

पांडीचरी में हम फ्रांसीसी भाषा को प्रोत्साहन दे रहे हैं । हम वहां ऐसा विश्वविद्यालय स्थापित कर रहे है । यहां फ्रांसीसी भाषा होगी । ऐसा क्यों ? मुझे नहीं मालूम, पांडीचरी के अधिकांश लोग फ्रांसीसी भाषा जानते हैं । फिर भी, चूंकि फ्रांसीसी भाषा अच्छी भाषा है और हम इसे भारत में रखना चाहते हैं । इस के द्वारा विश्व के अन्य देश भारत को देख सकते हैं ।

†**श्री र० प० चटर्जी** (नवद्वीप) : प्रधान मंत्री चाहते हैं कि सभी राज्य भाषायें प्रगति करें । हमें बंगाली में क्यों नहीं बोलने दिया जाता । यदि बोलें तो हमें उसका अंग्रेजी अनुवाद देना पड़ता है । ऐसा नहीं होना चाहिये ।

रूस में जो कोई जिस भाषा में बोलना चाहे बोल सकता है । सुप्रीम सोवियत में सभी लोग अपनी अपनी भाषा में बोल सकते हैं । १०० लोगों में से ४० लोगों की कोई भाषा नहीं थी । अतः उन के लिये एक भाषा बना दी गई ।

---

†मूल अंग्रेजी में

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : विभिन्न राष्ट्रीय भाषाओं में बोलने में कोई एतराज नहीं । कठिनाई यह होगी कि कई लोग इसे नहीं समझ सकेंगे । हम अनुवाद की व्यवस्था कर सकते हैं ।

तथाकथित उर्दू और हिन्दी में उत्तर प्रदेश में टक्कर थी । यह बड़ा सारहीन विवाद था । कोई भी पक्ष अपनी भाषा की प्रगति की ओर ध्यान नहीं देता था । एक दूसरे को नीचे गिराना चाहते थे । नतीजा यह हुआ कि थोड़ी सी प्रगति नहीं हुई ।

उर्दू भाषा कई भाषाओं का मिश्रण है । इस में लगभग ७५–८० प्रतिशत हिन्दी के शब्द हैं और लगभग २५ प्रतिशत शब्द फार्सी, अर्बी और तुर्की के हैं । यह बहुत स्पष्ट है कि जब दो भाषायें इकट्ठी होती हैं, तो वे एक दूसरे को मजबूत बनाती हैं । दूसरी भाषा की बदनामी कर के अपनी भाषा के उत्थान की आशा करना बहुत गलत है । हम हमेशा भाषा को अफसरों और क्लर्कों के साथ जोड़ देते हैं । मुझे इस से नफ़रत है । क्या १०० या १,००० या १०,००० क्लर्कों के किसी भाषा के प्रयोग से साहित्यिक भाषा बनती है ।

हिन्दी भाषा अधिक से अधिक क्लिष्ट होती जा रही है । तभी गांधी जी ने आसान हिन्दी पर जोर दिया, ऐसी हिन्दी जिसे अधिक लोग समझ सकें और जिस में हिन्दी और उर्दू के शब्द मिले हों और आधार हिन्दी भाषा का हो । जब आप अन्य शब्दों को हिन्दी में आने से रोकोगे तो भाषा की प्रगति बन्द हो जायगी ।

सभा को विशाल रूप से इस प्रश्न पर विचार करना चाहिये । हम कठिन समय में से गुजर रहे हैं और समय की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कुछ नर्मी से काम लिया जाना चाहिये । तंग विचारों से प्रगति रुक जाती है । मुख्य प्रश्न प्रत्येक क्षेत्र में भारत की प्रगति का है । जो भी हम कदम उठायें उस बड़े प्रश्न का ध्यान रख कर उठाना चाहिये । यदि हम हिन्दी का सम्मान करें और इसे बन्द जगह में रख दें जिस से कि इसकी ओर राष्ट्र की प्रगति बन्द हो जाती है तो क्या लाभ होगा ? भाषाओं का विकास राष्ट्र के विकास से सम्बद्ध है । दोनों एक दूसरे की सहायता करते हैं । हमें इस प्रश्न पर विशाल रूप से विचार करना चाहिये और इस बात का ध्यान रखना है कि हम अपने बड़े ध्येय की ओर अग्रसर हों ।

धन्यवाद ।

†**श्री महताब** (अंगुल) : भारत में बहुत भाषायें बोली जाती हैं, परन्तु इस से राजभाषा के विकास में बाधा नहीं होनी चाहिये ।

राजभाषा और राष्ट्रभाषा में अन्तर है । डा० गोविन्द दास हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा कहते हैं । यदि लोगों की राय ली जाये, तो सभी सहमत होंगे कि भारतीय भाषाओं में से एक भाषा राजभाषा होनी चाहिये इसके बाद प्रश्न उठता है कि

†**डा० गोविन्द दास** (जबलपुर) : मैं ने यह कभी नहीं कहा कि केवल हिन्दी ही हमारी राष्ट्रभाषा है । मैं तो १४ भाषाओं में से प्रत्येक भाषा को राष्ट्रभाषा मानता हूं ।

†**श्री महताब** : चूंकि हिन्दी भाषी लोगों की संख्या अन्य भाषा बोलने वाले लोगों से अधिक थी, अतः हिन्दी को राजभाषा बनाने का निर्णय किया गया ।

[डा० सरोजिनी महिषी पीठासीन हुईं ।]

---

†मूल अंग्रेजी में ।